ebrothers.com, for detailed information on ayurveda books, visit our website www.jaypeebrothers.com, for detailed information on ayurveda books

द्रव्यगुण विज्ञान

(प्रथम भाग)

(राष्ट्रीय भारतीय चिकित्सा पद्धति आयोग के पाठ्यक्रमानुसार)





लेखक

आचार्य वैद्य ताराचन्द शर्मा

वैद्या साक्षी शर्मा

सहायक

वैद्य मनोज कुमार शर्मा

वैद्य अभिजीत शर्मा

भूमिका लेखिका

प्रो. (डॉ.) तनुजा मनोज नेसरी

JAYPEE

अनुक्रमणिका

1. द्रव्यगुण-विज्ञान **1-28**

1. विषय प्रवेश 1-2
2. द्रव्यगुण शास्त्र परिभाषा 3
3. द्रव्यगुण विज्ञान के सप्त पदार्थों का लक्षण, 3
4. द्रव्य, रस, गुण, वीर्य, विपाक प्रभाव एवं कर्म 3
5. द्रव्य विज्ञान द्रव्य, व्युत्पत्ति, निरुक्ति, परिभाषा 4
6. पांचभौतिकत्व 5
7. द्रव्य का औषधत्व 6
8. द्रव्य वर्गीकरण संहिता एवं निघण्टु के अनुसार 7-13
9. चरक के दशेमानी गण का सामान्य परिचय। 14-18
10. निम्नलिखित कर्मो की परिभाषा एवं उदाहरण- दीपन, पाचन, संशोधन संशमन, अनुलोमन, संस्रन, भेदन, रेचन, छेदन, लेखन, ग्राही, स्तम्भन, मदकारी, प्रमाथी, अभिष्यन्दी, व्यवायी, विकासी, रसायन, वाजीकरण, जीवनीय, बल्य, बृंहण, लंघन, मेध्य। 18-20
11. सुश्रुत और चरक में वर्णित वर्ग का वर्णन 20-25
12. द्रव्य की प्रधानता 26-28

2. रसविज्ञान **29-48**

1. रस विज्ञान व्युत्पत्तिपरक अर्थ निरुक्ति परिभाषा 29
2. रस का अर्थ 29
3. रस मधुर, अम्ल, लवण, कटु, तिक्त एवं कषाय 30
4. विभिन्न मतानुसार षड़रस वर्णन 30-32
5. ऋतु एवं षड़ रस वर्णन 32
6. रस का पांच भौतिक संघटन 33-34

7. रसों की भौतिक पहचान 35
8. रसों के लक्षण एवं गुण 35
9. रस एवं त्रिदोष, कोपन, शमन 36
10. रसों के अति प्रयोग का दुष्प्रभाव 39
11. रस भेद विकल्प 37-40
12. षड़रसों के गुण एवं कर्म 40
13. व्यक्त अव्यक्त या अनुरस 41
14. रस अनुरस भेद 42
15. रसों का रूपान्तरण 42
16. रसोपलब्धि 43-45
17. रसों की प्रधानता (वैशिष्ट्य) 46-47
18. रस स्कन्ध 47-48

3. गुण विज्ञान 49-68

1. गुणों का महत्व 49
2. गुण निरुक्ति व्युत्पत्ति, परिभाषा एवं लक्षण 50
3. वर्गीकरण 51
4. आध्यात्मिक गुण 54
5. द्रव्यों के भौतिक गुण 52
6. 41 गुण भेद वर्णन 54
7. विशिष्ट गुण 63
8. परादि गुण 64
9. गुणों की प्रधानता 66
10. गुर्वादि गुणों का विस्तार से वर्णन 55-63

4. विपाक विज्ञान 69-80

1. विपाक विज्ञान विपाक, निरुक्ति, व्युत्पत्ति, परिभाषा, लक्षण 69
2. अवस्थापाक 71

3. निष्ठापाक 72
4. विपाक प्रकार (द्विविध, त्रिविध, पंचविध) विपाक गुण एवं कर्म 72-77
5. विपाक का तारतम्य 78
6. विपाक, दोष, धातु एवं मलानुसार गुण कर्म 79
7. विपाकोपलब्धी हेतु 79
8. विपाक की प्रधानता 78
9. रस एवं विपाक में भेद 79

5. वीर्य विज्ञान 81-90

1. वीर्य विज्ञान निरूक्ति, व्युत्पत्ति, परिभाषा 81-82
2. स्वरूप एवं भेद 82
3. द्विविध एवं अष्ठविध 83-85
4. वीर्य का वीर्य निर्धारण 86
5. पांचभौतिकत्व 88
6. वीर्य का सामान्य सिद्धान्त एवं अपवाद 88
7. वीर्य की प्रधानता 89

6. प्रभाव विज्ञान 91-96

1. प्रभाव विज्ञान परिभाषा, लक्षण, निरूक्ति, लक्षण 91-92
2. प्रभाव के भेद एवं प्रभाव जन्य कर्म 93
3. रस, गुण, वीर्य विपाक एवं प्रभाव का बलाबल निरूपण-सामान्य प्रत्ययारब्ध एवं विचित्र प्रत्ययारब्ध 94
4. प्रभाव की प्रधानता 95

7. कर्म विज्ञान 97-108

1. कर्म विज्ञान लक्षण, परिभाषा 97-98
2. क्रियात्मक स्वरूप एवं भेद 99
3. द्रव्य गुण प्रभावज कर्म 103

4. सामान्य एवं विशेष कर्म 104
5. रस प्रभावज कर्म 105
6. सांस्थानिक कर्म 107

8. प्रकीर्ण प्रकरण 109–175

1. द्रव्य गुण शास्त्र की ऐतिहासिक विवेचना 109
2. व्यावहारिक उद्भिज्य शास्त्र 111
3. कृत्रिम वन विज्ञान या कृषि शास्त्र 112
4. वनौषध रचना क्रिया विज्ञान 116
5. वृक्षायुर्वेद 117
6. भेषज परीक्षा विधि, द्रव्य संग्रह देश ज्ञान, देश वर्गीकरण 118
7. औषधियों की खेती 121
8. भूमि स्वरूप (क्षेत्र वर्णन) 121–124
9. औषध उत्पाद सुरक्षा एवं रोग निवारण 125
10. औषध उत्पादन योग्य भूमि 126
11. उद्भिज विकृति विज्ञान 127
12. संरक्षण एवं संग्रहण विधि (वानस्पतिक) 128
13. संग्रह काल वीर्य के अनुसार (संहितानुसार) 129
14. औषध-अंग प्रयोग (ऋतु विशेष में अवयव ग्रहण काल) 129–130
15. प्राणिज (जांगम द्रव्य) ग्रहण विचार 131
16. नवीन प्राचीन द्रव्य ग्रहण विचार एवं स्थान विशेष से औषध गुण धर्म 132
17. संरक्षण विधि 134
18. भेषजघर 135
19. काल विभाग वर्णन 135–138
20. मान परिभाषा, मागध कलिंगमान 138–142
21. औषध परीक्षा (उत्तम हीनादि) 142–143
22. हिताहित द्रव्यों का ग्रहण विचार 143–144
23. विरूद्ध द्रव्य विचार 144–148

24. अभाव एवं प्रतिनिधि द्रव्य 149–153

25. शब्द संज्ञा पर्याय कथन 153

26. व्यावहारिक शब्द नामकरण 155

27. रोगानुसार शामक द्रव्य 156–157

28. मिश्रण गण– औद्भिदगण, बृहत्पंचमूल, लघुपंचमूल, वल्लीपंचमूल, कण्टक पंचमूल, तृणपंचमूल, मध्यम पंचमूल, जीवनीय पंचमूल, पंचपल्लव, त्रिफला, त्रिकटु, त्रिमद, चतुरूषण, पंचकोल, षडूषण, चतुर्बीज, जीवनीयगण, अष्टवर्ग, त्रिजातक, चतुर्जातक, कटुचतुर्जातक, पंचतिक्त, अम्लपंचक, चातुर्भद्र, त्रिकर्षिका, स्वल्पत्रिफला, मधुरत्रिफला, महाविष, उपविष, अग्रेय औषध वर्ग का सोदाहरण ज्ञान, जंगमगण, क्षीराष्टक, मूत्राष्टक, पित्तपंचक, पार्थिवगण–लवण पंचक, क्षारद्वय, क्षाराष्टक 157–161

29. भेषज कल्पना 164–171

30. भेषज कल्पना पारिभाषिक परिभाषा 171–173

31. औषध भक्षण काल 173–174

32. औषध मार्ग 175

33. औषध व्यवस्था पत्र 175

9. प्रशस्त भेषज एवं भेषज परीक्षा 177–180

1. द्रव्य शोधन विधि 177

2. द्रव्य अपमिश्रण ज्ञान एवं निवारण 178

3. निघण्टु परिचय, धन्वन्तरि, राज निघण्टु, भाव प्रकाश निघण्टु 179–180

10. Pharmacology 181-236

Brief Knowledge about pharmacology of the following- anesthetics, CNS depressants, Sedatives, Hypnotics, Tranquilisers, Antipyretics, Analgesics, Antiepileptics, Antihypertensive, Antianginal, Antiplatelet, Hypolipidzemic, Hemopoetic, Coagulants, Bronchodilators, Aerosols/Inhalants, Expectorants, Digestants, Carminatives, Antacids, antiulcer, Laxatives, Antidiarrheals, Antiemetic, Hepatoprotective, Diuretic, Antidiuretic, Lithotriptic, Anti-inflammatory, Hormonal therapy, Antiobesity, Antidiabetic, Antithyroid, Oxytocic, Galactagogues, Contraceptives, Styptics, Anthelmintic, Antifungal, Vitamins, Minerals, Water imbalance and IV fluids, Vaccines, Antivenom, Antirabbies serum, Local antiseptics, Drugs in ophthalmic practice, Anticancer drugs and immunomodulators.

अध्याय
3

गुण-विज्ञान

सृष्टि में गुणों का क्रमिक विकास बहुत प्राचीन हैं। परमाणुवाद के सिद्धांत ज्ञान से पूर्व गुण का ज्ञान हो चुका था क्योंकि प्रकृति को **त्रिगुणात्मिक** कहा गया है। अर्थात् प्रकृति में सत्व, रज तम ये तीन गुण प्रारम्भ से मौजूद थे। इन्हीं गुणों के पारस्परिक सहयोग से ही सृष्टि की उत्पत्ति हुई। सतोगुण और रजोगुण के मिलने से पंच ज्ञानेन्द्रियों का विकास हुआ तथा रजोगुण तमोगुण के पारस्परिक संयोग से पंचतन्मात्रा और महाभूतों का निर्माण हुआ।

पंचमहाभूतों में अपने गुणों का विकास शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्ध, के रूप में हुआ। इन्हीं गुणों के संगठन से संसार, के प्रत्येक कण का निर्माण हुआ। इसीलिए तो **सर्व द्रव्यं पांचभौतिक अस्मिन अर्थे** कहा गया है। गुणों की खोज निरन्तर जारी रही और उसी के परिणाम स्वरूप 17 गुणों का ज्ञान हुआ। दार्शनकों के विचार विमर्श से 24 गुण तथा चिकित्सा की दृष्टि से नवीन गुणों का ज्ञान बढ़ा। औषधियों व शरीर की पुष्टि के लिए आयुर्वेद में 41 गुणों की गणना की जाने लगी। इसी विकास के फल स्वरूप त्रिगुण से इकतालीस गुण और बाद की खोज से विकाशी, व्यवायी इत्यादि अनेक चिकित्सोपयोगी गुणों का विकास हुआ।

गुणों का महत्वः-

द्रव्य गुण विज्ञान में जितना महत्व द्रव्य का है उतना ही गुण का भी है। क्योंकि द्रव्य का महत्व भी उसके गुणों पर आधारित है। यदि द्रव्य निर्गुण हो तो उसका कोई अस्तित्व नहीं रह जाता। संसार में लोक भाषा एवं साहित्य की उक्ति सभी जगह विख्यात है कि वस्तु की पूजा नहीं होती, उसके गुणों की होती है। अतः द्रव्य भी गुणों के कारण ही विख्यात है।

देखा जाय तो रस, वीर्य, विपाक आदि भी गुणों के ही अन्तर्गत आते हैं। अतः इस शास्त्र को द्रव्यगुण विज्ञान नाम दिया गया है। द्रव्य शब्द में द्रव्य से सभी प्रकार के द्रव्यों का बोध हो जाता है तथा गुण से रस, वीर्य, विपाक आदि का भाव लिया जाता है, इनके विशेष ज्ञान का नाम विज्ञान है। लेकिन आयुर्वेद में गुणों का अलग भी वर्णन किया गया है। अतः रस, वीर्य, विपाक से पूर्व आयुर्वेदोक्त सभी गुणों को जान लेना भी आवश्यक है।

वैशेषिक दर्शन में गुणों की संख्या 24 बताई गई है लेकिन यह पदार्थ विज्ञान का विषय है। द्रव्य गुण शास्त्र में वर्णित गुण वैशेषिक गुणों से भिन्नता रखते हैं। वैशेषिक के गुण केवल स्पर्शेन्द्रिय आदि से ज्ञात होने वाले गुण ही हैं। लेकिन आयुर्वेद में वर्णित गुण बाह्य या आभ्यान्तर प्रयोग करने से शरीर पर द्रव्यों की जो क्रिया होती है उसी को सूचित करने वाले हैं। अतः गुणों में यह स्वरूप भेद होने का कारण ही वैशेषिक दर्शन में वर्णन किए गए गुणों से भिन्न प्रतीत होते हैं।

JAYPEE BROTHERS

गुण की परिभाषाः- द्रव्यों में पाये जाने वाले शीत उष्णादि भौतिक धर्मों को गुण कहा जाता है।

गुण लक्षणः- **1. समवायि तु निश्चेष्टः कारण गुणः (चरक)**

2. अथ द्रव्याश्रिताज्ञेयाः निर्गुणा निष्क्रिया गुणाः (कारिकावली)

3. विश्वलक्षणाः गुणाः (रसवैशेषिक)

1. जो द्रव्य में समवाय रूप से आश्रित हो, चेष्टा रहित हो, गुण रहित हो तथा कार्य के प्रति असमवायि कारण हो उसे गुण कहते हैं।
2. जो द्रव्य आश्रित हो, निर्गुण हो एवं क्रिया रहित हो उसे गुण कहा जाता है।
3. जिसके लक्षण भिन्न हो उसे गुण कहते है।

गुण निरुक्ति :- गोणत्वाद् गुण संज्ञकः।

लक्षण एवं परिभाषा विशेष वक्तव्य :- दार्शनिक तथा आयुर्वेदीय ग्रन्थों में गुणों के लक्षण एवं परिभाषा पर अनेक विचार दृष्टिगोचर होते हैं व सभी का दृष्टिकोण भिन्न रहा है। दर्शन ग्रंथों का मुख्य लक्ष्य ब्रह्मांड की उत्पत्ति का वर्णन करना था। इसी कारण आणविक, संयोग से संसार की रचना का सिद्धान्त प्रतिपादन करने वाले महर्षि कणाद ने सर्वप्रथम गुण के विषय में इस प्रकार लिखा है :-

''द्रव्याश्रया गुणवान संयोग विभागेष्व कारणमनपेक्ष इति गुणः''।

अर्थात् जो द्रव्य में आश्रय करने वाला गुण या गुणान्तर रहित हो और संयोग विभाग का कारण न हो अर्थात् निष्क्रिय हो उसे गुण कहते हैं।

कणाद के लक्षणों के बाद कारिकावलीकार ने परिभाषा देते हुए लिखा है कि :- **''अथ द्रव्याश्रिता ज्ञेया निर्गुणा निष्क्रिया गुणा''** अर्थात् जो द्रव्य में आश्रित हों, निर्गुण एवं क्रिया रहित हो उसे गुण कहा जाता है।

उपरोक्त दोनों परिभाषाओं में समानता ही प्रतिपादित होती है। अतः इस से संतुष्ट न होकर नागार्जुन ने लिखा है कि-

''विश्व लक्षणा गुणा'' अर्थात् जिसका लक्षण भिन्न या अनेक हो उसे गुण कहते हैं। इसकी निरुक्ति करते हुए लिखा है कि :- **''विश्वं विकिर्णं भिन्नं लक्षणं येषां ते विश्व लक्षणा गुणाः।''** क्योंकि यदि गुण व कर्म रहित हो और द्रव्याश्रयी गुण हो तो फिर चरक के सूत्र :- **''सार्थागुर्वादयो बुद्धिप्रयत्नान्तापरादयः''। गुणा प्रोक्ताः सूत्र** की पूर्ति न होती और ये सभी लक्षण नव कारण द्रव्यों में ही रहते।

गुणों को भिन्न लक्षणों वाला बताने का कारण यह भी है कि द्रव्य, रस, वीर्य और विपाक इन प्रत्येक के एक एक लक्षण से भेद प्रभेदों का ग्रहण हो जाता है। जैसे शब्दादिकों का आश्रय द्रव्य, रसनेन्द्रिय ग्राह्य रस, कर्म लक्षण वीर्य, परिणाम लक्षण विपाक है ऐसा गुण का एक ही लक्षण नहीं है जिससे सभी गुणों का अन्तर्भाव हो जाय। गुण प्रत्येक इन्द्रिय द्वारा ग्राह्य है जैसे शीत उष्णादि स्पर्शेन्द्रिय ग्राह्य है तथा स्निग्ध रूक्षादि चक्षुरिन्द्रिय ग्राह्य है। इन्हीं सब कारणों को देखते हुए गुणों को विभिन्न लक्षणों वाला बताया गया है।

इन सभी से विपरीत चरक ने सर्वद्रव्य समूह के लिए द्रव्य की परिभाषा विस्तृत की है तथा गुण व कर्म का भिन्न-भिन्न अस्तित्व माना है :- **''समवायी तु निश्चेष्टः कारणं गुणः''**

JAYPEE BROTHERS

अर्थात् जो द्रव्य में समवाय रूप से आश्रित हों, चेष्टा रहित हों, गुण रहित हों तथा कार्य के प्रति असमवायि कारण हो, उसे गुण कहते हैं। इससे गुण की परिभाषा विस्तृत हो गई। इसी कारण **''सर्व द्रव्य पांचभौतिकम्''** मानना पड़ा।

गुणों का आयुर्वेद में प्रयोजन :-

चरक में गुण की परिभाषा से यह स्पष्ट कर दिया है कि गुर्वादि 20 गुण द्रव्य में आश्रित होकर निष्क्रिय रूप से रहते हैं। उनमें स्वयं कार्य क्षमता नहीं होती। ये वमन विरेचनादि कर्मों में साधन होते हैं, इस प्रकार कर्त्ता तो द्रव्य ही है किन्तु अप्रधान रूप में साधन होने से गुण कार्मुक माने जाते हैं। इसी कारण इनकी संज्ञा गौण की गई है। चरक व सुश्रुत मे सत्व, आत्मा, इन्द्रिय के संयोग को शरीर माना गया है। यही कारण है कि गुण वर्णन में औषध द्रव्यों में रहने वाले गुर्वादि 20 गुणों का ही नहीं बल्कि इन द्रव्यों के अतिरिक्त वैशेषिक और आत्म गुण तथा महाभूत व अन्य द्रव्यों के सामान्य 10 गुणों का भी वर्णन किया है।

गुर्वादि 20 गुणों को आहार व औषध द्रव्यों के साथ विशेष सम्बन्ध होने से शारीरिक गुण कहा गया है। वैशेषिक दर्शन में केवल 24 गुणों का ही उल्लेख है। दर्शनों का उद्देश्य लोगों को पदार्थों का ज्ञान मात्र कराना था। परन्तु आयुर्वेद में पदार्थों के अतिरिक्त चिकित्सा सम्बन्धी गुणों को भी प्रकट करना था। इसीलिए द्रव्याश्रित गुणों को अनेक कर्मानुभव रूप में बताकर वर्णन किया है। वैशेषिक की तो यह विशेषता है कि उन्होंने किस गुण वाले द्रव्य का किस महाभूत से संगठन है इसका भी वर्णन किया है।

गुणों के लिए जिन क्रियाओं का उल्लेख किया है उनमें मतभेद हैं क्योंकि आयुर्वेद में निर्जीव द्रव्यों के बदले सजीवों पर भी उसी क्रिया का उल्लेख किया गया। इस कारण भी अन्तर आया है, इसी कारण गुणों का विभाजन मूर्त व कार्मुक गुण के रूप में किया गया है।

गुणों के भेद- (वर्गीकरण)

मूर्तगुण :- स्वरूप की दृष्टि से गुरु शब्द के लक्षण में कहा गया है कि-

''गुरूत्व जलभूम्यो पत्तन कर्म कारम्''

मूर्त द्रव्य जल व भूमि महाभूत प्रधान द्रव्य भारी होते हैं। इन्हें ऊपर छोड़ा जाय तो पृथ्वी पर गिरते हैं। अतः भार से जो नीचे गिरे उसे गुरु या भारी कहते हैं।

कार्मुक गुणः- हेमाद्रि ने अपनी टीका में कार्मुक के लिए लिखा :- **''यस्य द्रव्यस्य बृंहणे कर्मणि शक्ति सः गुरुः''** अर्थात जिस द्रव्य से शरीर में पहुंचने के बाद धातु पोषण कर्म होता है उसे गुरु कहते हैं तथा गुरु द्रव्य देर से पचता है।

अतः यह स्पष्ट हो गया कि गुरु के ही दो अर्थ हो गये। द्रव्य अपने गुणों के आधार पर ही त्रिदोष एवं सप्त धातुओं के विकारों को दूर करने में समर्थ होता है। अतः गुणों का चिकित्सा की दृष्टि से विशेष अध्ययन की अत्यावश्यकता है।

गुण सम्बन्धी पाश्चात्य विचार :- गुण के सम्बन्ध में पाश्चात्य दार्शनिकों के भी विभिन्न मत हैं। लाँक के विचार में, मन में रूप आदि का जो बोध होता है उस बोध को प्रत्यय कहते हैं और वस्तु में उन प्रत्ययों के प्रयोजक जो धर्म हैं उन्हें गुण कहते हैं। द्रव्य मुख्य है तथा इसके वर्ण, रस आदि इन्द्रियों के सम्बन्ध से विदित होते हैं। अतः इन्हें गौण कहा जाता है।

JAYPEE BROTHERS

वर्कले के अनुसार द्रव्यों का ज्ञान गुणों के द्वारा होता है। यदि किसी द्रव्य में गुण नहीं हो तो उसका ज्ञान नहीं हो सकता। जैसे-चाक में से सफेदी, आकार, चिकनापन, भारीपन आदि सभी गुण किसी तरह निकाल दिये जायें तो क्या रह जायेगा, कुछ भी नहीं। हमें गुण अलग नहीं मिलते अर्थात् वे द्रव्य में ही आश्रित हैं। अत: यह सिद्ध किया गया है कि सभी प्रकार के मुख्य या गौण गुण द्रव्यों में ही रहते हैं तथा गुणों के बिना द्रव्यों का कोई महत्व नहीं है।

भौतिक गुण वर्णन :- इस सृष्टि में असंख्य द्रव्य हैं जो भिन्न-भिन्न लक्षण व स्वरूप वाले हैं। इसी आधार पर उनकी पृथकता प्रतीत होती है। ये पृथकता सूचक लक्षण ही प्रत्येक द्रव्य की गुण बोधक संज्ञायें ग्रहण करते हैं। यह सम्भव है कि प्रत्येक द्रव्य एक दूसरे से मिलता जुलता हो किन्तु उनमें एकदम साम्यता होना सम्भव नहीं। सभी द्रव्य पांच भौतिक हैं, यह सर्वमान्य सिद्धान्त हैं किन्तु उनके भौतिक गुणों का ज्ञान पंच ज्ञानेन्द्रियों से होता है, इन्द्रियां अपने शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धादि द्वारा विशेषता को प्रकट करती है। प्रत्येक द्रव्य में कोई न कोई स्वाद होता है, गन्ध होती है, उनकी आकृति और स्पर्श भी होता है। आकार एक सा होने पर भी मात्रा भिन्न होती है, गन्ध एक प्रकार की होने पर भी मात्रा भिन्न होती है, स्वाद एक ही होने पर भी कम या अधिक होता है। इसी आधार पर द्रव्य के भौतिक लक्षणों को एक से दूसरे से भेद बताने के लिए गुण प्रयुक्त किए जाते हैं। अत: जो दो पदार्थ लक्षणों द्वारा भिन्न प्रतीत होते हैं, उन दोनों के जातिगत स्वरूप संयोगज और उपादान गुण भी एक दूसरे से भिन्न होते हैं। द्रव्यों को इसी संयोगज गुणों के आधार पर पंचमहाभूतो से पांच वर्गो में विभक्त किया गया है। अत: एक वर्ग में जो लक्षण है वह एक वर्ग के सभी द्रव्यों में न्यूनाधिक रूप से परिलक्षित होते हैं। यही कारण है कि द्रव्य में एक जातीय होते हुए भी स्वयं के विशेष लक्षण और गुण भिन्न होते हैं। यह भी एक जातीय द्रव्यों में पृथकता को सूचित करते हैं।

गुण के स्थान :- यह पूर्व में बताये लक्षणों से ज्ञात होता है कि गुण द्रव्याश्रय है। अत: गुण प्राकृट्य तदाश्रयत भूत द्रव्य का ही कर्म होता है। गुण कर्म की उत्पत्ति में तदाश्रयभूत होता है। यह बात भी सिद्ध है कि गुण गुण में भी नहीं रहता। अत: द्रव्य में आश्रित रसादि के गुणों को वास्तव में तदाश्रित द्रव्य के गुण समझना चाहिए। चरक में लिखा है कि-**गुण गुणाश्रया नोक्ता स्तस्माद्रसगुणान् भिषक विद्यादद्रव्य गुणान्. .....(च0सू027)**

जब शीत, उष्ण, गुरू या लघु द्रव्य शरीर में जाता है तो उनका संयोग शरीर के विभिन्न गुण युक्त पाचक रसों के साथ होता है। वे उनके सम्पर्क व अङ्गों की पाक क्रिया के द्वारा सूक्ष्म खण्ड व परमाणु में विभक्त होते हैं। मधुर रस के परमाणु मधुर रस से, अम्ल के अम्ल से, कटु के कटु से मिलते या विभक्त होते हैं। इनके आधारभूत उत्पादक महाभूत पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु अपने-2 वर्ग से मिलकर या पृथक होकर संयोग विभाग की क्रिया करते हैं और अपने भौतिक गुणों के आधार पर रस रक्त आदि धातुओं की उत्पत्ति करते हैं।

द्रव्यों में भौतिक गुण :-

उत्पत्ति के आधार पर द्रव्यों की संख्या महाभूतों की दृष्टि से पंचविध होती है इन पाँचों में जो-जो गुण होते है वह नीचे दिये जा रहे हैं :-

1. **पार्थिवम् :-** चरक के अनुसार-**''गन्धगुण बहुलानि पार्थिवानि''**- अत: स्थूल, सान्द्र, मन्द, स्थिर, गुरु व कठिन पार्थिव है।

JAREE BROTHERS

सुश्रुत के अनुसार :- **''गन्ध बहुलमीषत्कषायं प्रायशोमधुर मिति पार्थिवम्''** अर्थात् गन्ध बहुल, गुरू, खर, कठिन, मंद, स्थिर, विशद्, सान्द्र, स्थूल गुण पार्थिव है।

2. **आप्यम् :-** सुश्रुत **''रस बहुलमीषत्कषायं लवणं मधुर प्रायमाप्यम्''** रस बहुल, ईषत्, कषाय, शीत स्तिमित, स्निग्ध, मन्द, गुरु, सर, सांन्द्र, मृदु, पिच्छिल आप्य हैं।

चरक :- **''रस बहुलानि आप्यानि''** द्रव, स्निग्ध, मन्द, मृदु, पिच्छिल आप्य है।

3. **तैजस :- सुश्रुत-** **''रूप बहुलमीषदालवणं कटु** रस, प्रायविशेषतश्चोर्ध्व गतिस्वभावम्'' रूप बहुल उष्ण, तीक्ष्ण, सूक्ष्म, खर, लघु, विशद आदि ऊर्ध्व गति वाले तैजस है।

चरक :- **''रूप गुण बहुलानि''** उष्ण, तीक्ष्ण, रूक्ष, लघु, विशद तेजस है।

4. **वायव्यम :-** सुश्रुत-**''स्पर्श बहुलमीषतिक्तम्'' स्पर्श बहुल ईषत्कषाय** सूक्ष्म, रूक्ष, खर, शिशिर, लघु, विशद, लघु, विशद वायव्य है।

चरक :- **''स्पर्श गुण बहुलानि''** स्पर्श, बहुल, लघु, शीत, रूक्ष, खर, विशद और सूक्ष्म गुण वायव्य हैं।

5. **नाभस :-** सुश्रुत-**''अव्यक्त रस शब्द बहुलमाकाशीयम्''** अव्यक्त रस शब्द बहुल श्लक्ष्ण, सूक्ष्म, मृदु, व्यवायी विशद्, विविक्तम् गुण नाभस हैं।

चरक-''शब्द गुण बहुलानि'' मृदु लघु, सूक्ष्म, श्लक्ष्ण आदि गुण आकाशीय है।

आचार्य प्रशस्तपाद के अनुसार :-

पदार्थों के वर्णन में आचार्य प्रशस्तपाद ने गुण पदार्थ का निरूपण करते समय गुणों का विभाजन इस प्रकार किया है- मूर्त, अमूर्त, मूर्तामूर्त।

मूर्तः- रूपरसगन्धस्पर्श परत्वापरत्व गुरुत्व द्रवत्व स्नेहवेगा मूर्तगुणाः।

अर्थात् द्रव्यों में पाये जाने वाले रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, द्रवत्व, स्नेह व वेग ये मूर्त गुण हैं।

अमूर्त :- बुद्धि, सुख, दुख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्माधर्म, भावना, शब्द, अमूर्तगुणाः। ये अमूर्त गुण है।

मूर्तामूर्त :- संख्या परिणाम पृथकत्व संयोग विभागादि मूर्तामूर्त अर्थात् उभय गुण बताये गये हैं।

इसी प्रकार सामान्य व विशेष की दृष्टि से भी दो भेद और किए गए हैं।

1. विशेष गुण :- रूप, रस, गन्ध, स्पर्श, स्नेह सांसिद्धिकद्रवत्व, बुद्धि सुख, दुख, इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, धर्म व अधर्म, भावना तथा शब्द ये विशेष गुण बताये गये हैं।

2. सामान्य गुण :- संख्या, परिणाम, पृथकत्व, संयोग, विभाग, परत्व, अपरत्व, गुरुत्व, नैमित्तिक द्रवत्व तथा वेग सामान्य गुण हैं।

गुणों की संख्या एवं प्रकारः-

शारीरिक उपयोग की दृष्टि से चरक में गुण तीन प्रकार के बताये गये है। 1. वैशैषिक 2. सामान्य 3.

JAYPEE BROTHERS

आत्म गुण। सामान्य गुणों को भी दो भागों में विभाजित किया गया हैं गुर्वादि और परादि। गुर्वादि गुणों को शरीर गुण भी कहा जाता है। पंचमहाभूतादि गुणों से सम्मिलित एवं उनके विशेष गुण होने के कारण वैशैषिक गुण कहा जाता है। वैशेषिक और सामान्य गुणों को भौतिक जगत से संबंधित होने से आधिभौतिक एवं आत्मगुणों को आत्मा से संबंध होने के कारण आध्यात्मिक गुण भी कहा जा सकता है।

चक्रपाणि ने इन 41 गुणों को तीन वर्ग बनाये हैं :-

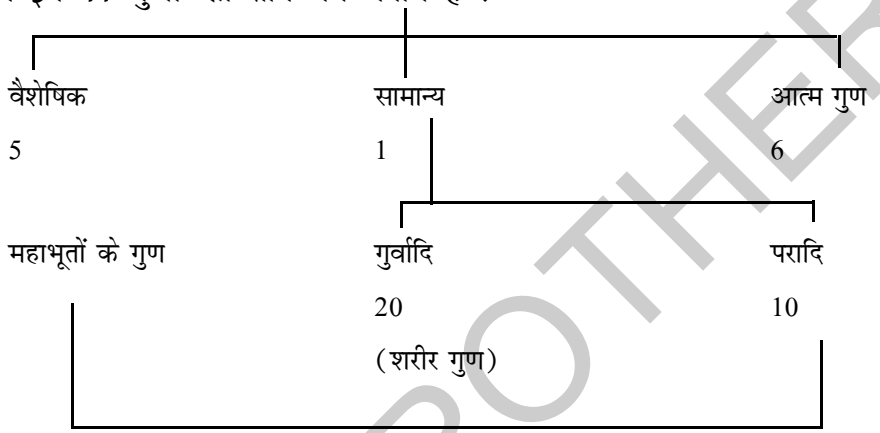

इन दोनों को आधिभौतिक कहा है क्योंकि ये भौतिक जगत से संबंध बनाये हुए हैं।

गुण संख्याः-

चरक में गुणों की संख्या 41 बताई गई है। जो चरक के इस सूत्र से व्यक्त होती है।

सार्थाः गुर्वादयो बुद्धिः प्रयत्नान्ताः परादयः। गुणा प्रोक्ता :- (च०सू०1)

अर्थात **सार्था-अर्थाशब्दादयो गेया गोचरा विषयागुणाः** से पंचमहाभूतों के 5 विशिष्ट शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गन्धादि गुणों का निर्देश है जो ज्ञानेन्द्रियों के विषय हैं। तथा गुर्वादि 20 गुण बताये हैं, इन्हें शारीरिक गुण भी कहा है। बुद्धि से प्रयत्न तक आध्यात्मिक 6 गुण एवं परादि 10 गुणों का निर्देश किया गया है। इस प्रकार कुल गुण योग 41 है:-

आध्यात्मिक 6, गुर्वादि 20, परादि 10 विशिष्ट 5 = 41.

विशेष :- ''मनो-मनोर्थो बुद्धिरात्मा चेत्यध्यात्म द्रव्य गुण संग्रह'' इस सूत्र से योगेन्द्रनाथ सेन आध्यात्मिक गुणों में मन का भी समावेश करते हैं। इससे गुणों की संख्या में एक की वृद्धि होकर 42 हो जाते हैं। लेकिन आयुर्वेद में आध्यात्मिक गुणों अर्थात् आत्म गुणो का वर्णन इस प्रकार किया गया है :-

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं प्रयत्नश्चेतना धृतिः।
बुद्धिः स्मृतिरहंकारो लिङ्गानि परमात्मनः।। ये आत्मा के विशेष गुण हैं।

आध्यात्मिक गुणः-

जैसा कि पहले गया है कि बुद्धि इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख और प्रयत्न आत्मा के गुण होने से आध्यात्मिक गुण कहे जाते हैं एवं द्रव्य गुण शास्त्र में इन का विशेष महत्व होने के कारण सामान्य परिचय दिया जा रहा

JAYPEE BROTHERS

है :-

बुद्धि :- 'सर्व व्यवहार हेतुर्ज्ञान बुद्धिः' अर्थात् समस्त द्रव्यों का ज्ञान जिसके कारण होता है उसे बुद्धि कहा जाता है। जैसे:- यह पट है, यह आंवला है, यह जल है आदि। ज्ञान के माध्यम स्मृति, चेतना, धृति, अहंकार आदि इसी के अन्तर्भाव होते हैं।

सुख :- 'धर्मजन्यमनुकूलवेदनीय गुणः सुखम्' अर्थात् जो धर्म से उत्पन्न होता है तथा परम प्रेम का विषय है उस गुण को सुख कहा जाता है।

दुःख :- 'अधर्मजन्यं प्रतिकूलवेदनीयं गुणो दुःखम्। अर्थात् जो अधर्म से उत्पन्न होता है और परमद्वेष का विषय है उसे दुःख कहते हैं।

इच्छा :- 'स्वार्थ परार्था वाऽप्राप्त प्रार्थनेच्छाः'। अपने तथा दूसरे के लिए अप्राप्त अर्थ की प्राप्ति की कामना का नाम इच्छा है।

द्वेष :- 'प्रज्वलनात्मको द्वेष'। जिससे स्वयं या दूसरे को जलने के समान अनुभव हो उसे द्वेष कहते हैं।

प्रयत्न :- 'कृतिः प्रयत्नः'। अर्थात् किसी वस्तु प्राप्ति के लिए की गई चेष्टा प्रयत्न कहलाती है।

गुर्वादि गुण : (शारीरिक गुण)

सामान्य रूप से पंच-महाभूतों में रहने के कारण इन्हें सामान्य गुणों की संज्ञा दी गई है। इन्हें शारीरिक गुण भी कहा जाता है। क्योंकि इन्ही गुणों के द्वारा द्रव्य शरीर पर कर्म करता है। द्रव्य गुण शास्त्र की दृष्टि से इन गुणों का विशेष महत्व समझा जाता है। इसी कारण इनका विशेष वर्णन आगे दिया गया है। हालांकि गुण स्वतः निर्गुण तथा क्रिया रहित है। फिर भी किसी गुण का कर्म उसके आश्रय भूत द्रव्य का ही कर्म होता है। गुणों से कर्म की उत्पत्ति का तात्पर्य भी यही है कि वे शरीर धातुओं में जाकर अपने समान गुणान्तर की उत्पत्ति करते हैं। इसी क्रम में कर्म को प्रेरित करते हैं क्योंकि बिना कर्म के संयोग विभाग हो ही नहीं सकता। सुश्रुत में **'कर्मानुमेया गुणाः'** बताया है अर्थात् कर्मों के द्वारा गुणों का अनुमान शरीर में होना। इस अर्थ में गुर्वादि 20 गुणों को ही द्रव्य गुण शास्त्र में विशेष रूप से व्यक्त किया गया है।

संख्या :- गुर्वादि गुण संख्या में 20 होते हैं। इसके लिए अष्टाङ्ग हृदय में लिखा गया है कि :-

गुरू-मन्द-हिम-स्निग्ध-श्लक्षण-सान्द्र-मृदु-स्थिराः।
गुणाः ससूक्ष्म-विशदा विंशतिः स विपर्ययाः॥ (अ0हृ0)

अर्थात गुरु, लघु, शीत, उष्ण, स्निग्ध, रूक्ष, मन्द, तीक्ष्ण, स्थिर सर, मृदु, कठिन, विशद, पिच्छिल, श्लक्ष्ण, खर, स्थूल, सान्द्र, द्रव। इस प्रकार इन 20 गुणों के 10 युग्म होते हैं और प्रत्येक युग्म में दोनों गुण, एक दूसरे के विपरीत धर्म वाले होते हैं।

1. गुरु :- साधारणतया गुरु को भारीपन कहा जाता है। गुरु गुण पृथ्वी और जल की अधिकता से उत्पन्न होता है। इसलिए लिखा है कि **''गौरवं पृथ्वीमाप्यं च''।**

परिभाषा :- प्रयोग में जिसका पाक गुरु हो तथा जिसके कारण शरीर में गुरुता उत्पन्न हो उसे गुरु कहा जाता है।

JAYPEE BROTHERS

लक्षण :- ''गुरुत्वं जल भूभ्योः पतन कर्म कारणम्।'' अर्थात् जो द्रव्य पृथ्वी और जल की अधिकता से भारी होने के कारण वायुमण्डल में छोड़े जाने पर नीचे गिरता है उसे गुरु गुण कहा जाता है। (सु०सू०46)

कार्मुकगुण :- गुरु-गुण, शरीर को पुष्ट करने वाला, वातहर, देरी से पचने वाला तथा तृप्तिकारक होता है। जैसे- उड़द की पिठ्ठी, मूसली, घी आदि।

2. लघु :-''लघुस्तद्विपरीतसयाद् लैखनोरोपणस्तथा।'' (सु०सू०46) गुण गुरु के ठीक विपरीत लघु होता है। इसे सामान्य भाषा में हल्कापन कहा जाता है। लघुगुण, वायु, आकाश और अग्नि के गुणों की अधिकता वाला होता है।

परिभाषा :- जिसका पाक लघु हो तथा जो शरीर में हल्कापन उत्पन्न करे वह लघु कहलाता है।

कार्मुक गुण :- इससे शरीर में स्फूर्ति आती है, यह मल का क्षय करने वाला, शरीर में दुर्बलता लाने वाला, कफनाशक और वायु को बढ़ाने वाला तथा शीघ्र पाकी और पथ्य कहा जाता है। जैसे- मूंग, खील, पेयादि आदि।

इसीलिए कहा है कि :- लघुपथ्यं परं प्रोक्तं कफघ्नं शीघ्र पाकि च।

3. शीतः- सामान्य भाषा में ठण्डे को शीत कहते है। यह दाह आदि का शमन करने वाला है।

परिभाषा :- द्रव्य के जिस गुण में शरीर की उष्णता कम करने की शक्ति हो तथा जो जलन आदि कर्म का रोधक हो, उसे शीत गुण कहा जाता हैं ।

लक्षण :- ''ह्लादनः स्तम्भनः शीतो मूर्च्छातृट्स्वेददाहजित्'' सु०सू० 46 अर्थात् जिस द्रव्य का गुण स्पर्श एवं सेवन से विशेषकर उष्णता से दुःखी पुरुष को प्रसन्न करने वाला हो तथा जो स्तम्भन, वमन, अतिसार, मूर्छा, पिपासा, स्वेद और दाह को शांत करता हो वह शीत गुण है।

जल महाभूत की अधिकता वाले गुण को शीत कहा जाता है।

कार्मुक गुण :- द्रव्यों में संयोग का कारण मल-मूत्र आदि का स्तम्भन करने वाला, मन को प्रसन्न करने वाला, धातुओं की वृद्धि एवं रक्त का स्तम्भन करने वाला शीत गुण है जैसे चन्दन, खस, कर्पूर आदि।

4. उष्ण :- ''उष्णस्तद् विपरीतः स्यात् पाचनश्च विशेषतः। (सु०सू०46) इसे सामान्यता गर्म कहा जाता है। यह शीत के विपरीत गुणों वाला होता है।

परिभाषा :- जिसके शरीर में उष्णता बढ़े और जो पसीना लाने वाला हो उसे उष्ण गुण कहा जाता है।

लक्षण :- ''तैजसमौष्ण्यं तैक्ष्ण्यं च''। (र०वै०)

अग्नि महाभूत की अधिकता से उष्ण, आग्नेय या तीक्ष्ण हो उसे उष्ण गुण कहा जाता है।

कार्मुक गुण :- इसके सभी कार्य शीत के ठीक विपरीत होने के कारण मूर्छा, दाह, प्यास आदि को उत्पन्न करने वाला, धातुओं को घटाने बढ़ाने वाला, पित्त को बढ़ाने वाला, वात और कफ का शामक, पुरीष का प्रर्वतक होता है। जैसे सोंठ, चित्रक, मरिच आदि।

5. स्निग्ध :- स्निग्ध को सामान्य भाषा में चिकनाहट या चिकनापन कहा जाता है, यह विशेष रूप से जल महाभूत की अधिकता वाला होता है।

JAYPEE BROTHERS

परिभाषा :- जिसमें शरीर को आर्द्र करने की शक्ति हो उसे स्निग्ध गुण कहते है।

लक्षण :- 1. ''स्नेहोऽपां विशेष गुणः, 2. यस्य क्लेदने शक्तिः स स्निग्धः'' (हे)

अर्थात् जिसमें शरीर को मृदु, आर्द्र और क्लिन्न करने की शक्ति हो वह स्निग्ध है।

कार्मुक गुण :- यह वातहर, श्लेष्मा को बढ़ाने वाला, बाजीकरण, बल एवं वर्ण को बढ़ाने वाला एवं मल प्रर्वतक है। सुश्रुत में लिखा है-**''स्नेहमार्दवकृत् स्निग्धो बल वर्णकरस्तथा।'' (सुश्रुत)**

6. रूक्ष :- ''रूक्ष स्तद्विपरीतस्यात्। विशेषातः स्तंभनः खरः'' स्निग्ध के ठीक विपरीत रूक्ष गुण होता है। इसे सामान्य भाषा में रूखापन कहते हैं। यह वायु, पृथ्वी और अग्नि की विशेषता वाला होता है।

परिभाषा :- जिसके प्रयोग से शरीर में रूक्षता, कठिनता और शुष्कता उत्पन्न हो उसे रूक्ष कहा जाता है अथवा जिसमें शोषण करने की शक्ति हो वह रूक्ष गुण है।

लक्षण :- ''यस्य शोषणे शक्तिः स रूक्षः''। (हे०)

जिसमें शोषण करने की शक्ति हो वह रूक्ष गुण है।

कार्मुक गुण :- यह धातुओं को सुखाने वाला, मलों का शोषक, वात वर्धक, कफ नाशक, तथा अवृष्य होता है। जैसे जौ, कोद्रव, निवार, कंगुनी, श्यामक आदि। **रूक्षा समीरणकरम् परं कफहरं मतम् द्रव्याणि रूक्ष गुण बहुलानि आग्नेय वायव्यानि।**

रूक्ष गुण वाले द्रव्य पार्थिव एवं वायव्य गुण वाले होते हैं।

7. मन्द :-शास्त्रों में मन्द का विरोधी गुण आशुकारी बताया गया है। चरक में इसके स्थान पर तीक्ष्ण लिखा गया है। जिस गुण की क्रिया मन्द या देरी से हो, उसे मन्द कहते हैं। यह पृथ्वी एवं जल महाभूत की अधिकता वाला होता है।

परिभाषा :- जो द्रव्य शरीर में जाकर धीरे-धीरे शमन कर्म करे उसे मन्द कहा जाता है।

लक्षण :- 1. ''मन्दो यात्रा करः स्मृतः'' सु०सु० 2. ''चिरकारित्वं मन्दत्वम्''

अर्थात् देरी से कार्य करने वाले गुण को मन्द कहते है। इस दृष्टि से जो भी द्रव्य क्रिया को मन्द कर देते हैं, सभी मन्द कहे जाते हैं। मन्द गुण पृथ्वी और जल की अधिकता वाला होता है।

कार्मुक गुण :- कफ वर्धक, पित्त नाशक, धातुओं को बढ़ाने वाला, शरीर को मोटा बनाने वाला है। जैसे गिलोय, अहिफेन आदि।

8. तीक्ष्ण :- सामान्य भाषा में इसे शीघ्र कार्यकारी कहा जाता है। यह मन्द के ठीक विपरीत होता है। यह अग्नि महाभूत की अधिकता वाला है।

परिभाषा :- शरीर में शोधन कर्म करने वाले गुण को तीक्ष्ण कहते हैं।

लक्षण :- जो शीघ्र कार्य करने वाला हो वह गुण तीक्ष्ण कहलाता है।

कार्मुक गुण :- यस्य शोधने शक्तिः सः तीक्ष्णः (हे०) दाह, पाक और स्राव उत्पन्न करने वाला हो, पित्त को बढ़ाने वाला तथा वात और कफ का शमन करने वाला एवं मलों का प्रर्वतक है। जैसे जयपाल आदि।

JAYPEE BROTHERS

नोट :- इसके तीक्ष्ण प्रभाव के कारण त्वचा पर फफोले, शरीर में तीव्र प्रदाह होता है, जैसे स्नूहीक्षीर, अर्क आदि। यह मांस धातु को गलाने वाला है।

9. स्थिरः- जिसमें शोधन कर्म की शक्ति हो जो गुण अधिक समय तक नष्ट नहीं होता है वह स्थिर है। व्यवहार में गतिहीन को स्थिर कहते हैं। यह पृथ्वी महाभूत की अधिकता वाला है।

परिभाषाः- जिस में धारण और स्तम्भन करने की शक्ति हो वह स्थिर गुण कहलाता है।

लक्षण :- **''चलन रहितत्वं स्थिरत्वम्''। ''यस्य धारणे शक्तिः स स्थिरः''। (हे०)**

अर्थात् जो गुण मूत्र दोष एवं मलादि की गति को रोके और धातुओं में स्थिरता उत्पन्न करे वह स्थिर है अर्थात जिस गुण में गति नहीं हो वह स्थिर है।

कार्मुक गुण :- यह गुण कफ वर्धक, शक्ति देने वाला, धातुओं को बढ़ाने वाला, वायु और मलों को रोकने वाला है। जैसे जायफल, कुटज आदि। **स्थिरो वात मलस्तम्भी। (भा०प्र०)**

10. सर :-गतिशील प्रवृति वाले गुण को सर कहते हैं। इसमें जल महाभूत की अधिकता होती है। यह स्थिर के ठीक विपरीत होता है।

परिभाषा :- **यस्य प्रेरणेशक्ति स सरः (हे०)** जिस गुण में प्रेरणा करने की शक्ति हो वह सर है।

लक्षण :- **''यस्य सर्वत्: प्रवृतिशीलत्वं सरत्वम्''। सरस्तेषां प्रवर्तकः (भा०प्र०)**

जिस गुण में गति और प्रवृति पाई जाती हो उसे सर कहते हैं।

कार्मुक गुण :- यह कफ वर्धक, मलों को गति देने वाला, धातुओं का लेखन करने वाला है। जैसे अमलतास, हरड, बहेड़ा, आंवला आदि। यह कफ वर्धक तथा दोष धातुओं का अनुमोलन करने वाला भी है।

11. मृदु :- लोक भाषा में इसे मुलायम कहा जाता है। यह जल और आकाश महाभूत की अधिकता वाला गुण हैं। इसमें जल के कारण कोमलता और आकाश के कारण हल्कापन आता है।

परिभाषा :- जिस गुण में स्पर्श में कोमलता हो उसे मृदु कहते हैं।

लक्षणः- **''यस्य द्रव्यस्य श्लथने कर्मणि शक्तिः स मृदुः। (हे०)**

जो गुण अपने स्वभाव के कारण शरीर के एकांग या सर्वांग को कोमल और ढीला करे उसे मृदु कहते हैं।

कार्मुक गुण :- यह कफवर्धक, पित्त को शमन करने वाला, दाह, स्राव का नाश करने वाला, मलों को ढीला करने वाला होता है। स्नेह द्रव्य त्वचा द्वारा ग्रहण किये जाने पर शरीर में पहुंचने पर आहार कार्य में भी सहायक है। शरीर के धातु सूत्रों को कोमल करने वाला तथा शरीर में मृदुता उत्पन्न करने वाला है। जैसे- गेहूँ, चावल, स्नेह द्रव्य, शाली, तेल, वसा मज्जा, घी, नवनीत आदि।

12. कठिन :- लोक भाषा में इसे कड़ापन कहते हैं। यह मृदु से ठीक विपरीत होता है। यह पृथ्वी महाभूत की अधिकता वाला है।

परिभाषाः- जो गुण शरीर में दृढ़ता एवं कठिनता उत्पन्न करे उसे कठिन कहते हैं ।

लक्षण :- **''कठिनत्वं पार्थिवम्।'' (र०वै)**-**''संघातो अवयवानां कठिनम्।''** अर्थात् पृथ्वी गुण की अधिकता वाला कठिन गुण कहलाता है, शारीरिक अवयवों को कठिन करने वाला गुण भी कठिन है।

JAYPEE BROTHERS

कार्मुक गुणः- यह वात वर्धक, मलों को सुखाने वाला, धातुओं को दृढ़ करने वाला है जैसे मोती, प्रवाल, द्रव्य तथा कैल्सियम प्रधान दुग्ध, घृत, काकोल्यादि एवं अष्टवर्गादि के द्रव्य।

13. विशदः- इसे लोक भाषा में स्वच्छता कहा जाता है। इसमें पृथ्वी, वायु, तेज और आकाश चार महाभूत की अधिकता होती है।

परिभाषाः- जो देखने में साफ हो वह विशद कहलाता है।

लक्षणः- **''यस्यक्षालने शक्तिः स विशदः। (हे)** अर्थात् जिस गुण में पिच्छिलता को नष्ट करने की शक्ति हो उसे विशद कहा जाता है। **भाव प्रकाश ने-क्लेद छेदकरः ख्यातोविशदो व्रणरोपणः** लिखा है।

कार्मुक गुणः- वात वर्धक, मलों का शोषण करने वाला, व्रण का रोपण करने वाला होता है। शरीर के बल को कम करने वाला, शरीर की द्रवधातु का शोषण करने वाला है, जैसे मूंग, मद्य, लवलीफल, क्षार आदि।

14. पिच्छिलः- पिच्छिल को लोक भाषा में लुआबदार अथवा चिपचिपा कहा जाता है। इसमें जल महाभूत की अधिकता होती है।

परिभाषाः- जिसमें द्रव्यों को चिपकाने की शक्ति है, तन्तुल है, वह पिच्छिल कहलाता है।

लक्षणः- **''यस्य लेपने शक्तिः स पिच्छिलः''। (हे०)** अर्थात् जो गुण शरीर में लेपन कर्म करे वह पिच्छिल कहलाता है।

कार्मुक गुणः- यहां वातहर, कफ वर्धक, अस्थि संधान करने वाला, शरीर में गुरुपन पैदा करने वाला, बल्य तथा जीवनीय भी है। जैसे इसबगोल, बबूल निर्यास, पर्णी, मूसली, चिलचिम मछली आदि।

''पिच्छिलो जीविनो बल्यः संधानः श्लेष्मलो गुरुः'' (सु०)

15. श्लक्ष्णः- श्लक्ष्ण को लोक भाषा में चिकनापन कहा जाता है। इसमें अग्नि महाभूत की अधिकता होती है।

परिभाषाः- जिसका स्पर्श सुखकर हो वह गुण श्लक्ष्ण कहलाता है।

लक्षणः- **1.''श्लक्ष्णः स्नेहं विनाऽपि स्यात्। कठिनोऽपि हि चिक्कणः'' (भा०)**

2. ''यस्य रोपणे शक्तिः स श्लक्ष्णः'' (सु०)

अर्थात् जिसमें रोपण करने की शक्ति हो, वह श्लक्ष्ण कहा जाता है। जिसमें स्नेह रहित चिकनापन हो, वह श्लक्ष्ण है।

कार्मुक गुणः- यह कफ पित्त वर्धक, मल प्रवर्तक, धातुओं की वृद्धि करने वाला गुण है, जैसे श्लेष्मात्मक, दूधिया पत्थर, प्रवाल, वैक्रान्त, मुक्ता आदि।

16. खरः- इसे लोक भाषा में रूखापन कहा जाता है। यह पृथ्वी, वायु और तेज महाभूत की अधिकता वाला होता है।

परिभाषाः- **कर्कशोविशदो यथा (सु०सू०)** जिसका स्पर्श खर हो तथा जो विशद हो, उसे खर गुण कहा जाता है।

JAYPEE BROTHERS

लक्षणः-''परुषत्वं खरत्वं'' और ''यस्य लेखने शक्तिः स खरः''। (हे०) जिस गुण में लेखन अर्थात् व्रणादि में उभरे हुए धातु विकार एवं मांसांकुरों को छीलने की शक्ति हो वह खर गुण है।

कार्मुक गुणः- यह वात हर, मलों का शोधन करने वाला तथा धातुओं का ह्रास करने वाला गुण है। जैसे करंज।

17. सूक्ष्मः- इसे लोक भाषा में बारीक कहा जाता है। इसमें अग्नि, वायु और आकाश महाभूत की अधिकता होती है। जिसमें सूक्ष्म स्रोतों में प्रवेश करने की शक्ति हो, वह सूक्ष्म है।

परिभाषाः- जो शीघ्र ही शरीर के समान अवयवों में फैल जाये वह सूक्ष्म गुण कहलाता है।

लक्षणः- ''यस्य विवरणे शक्तिः स सूक्ष्मः'' अर्थात् जिस गुण में स्रोतों शोधक गुण हों तथा सूक्ष्म गुण के कारण सभी सूक्ष्म स्थूल अवयवों में प्रवेश कर जायें, वह सूक्ष्म है।

कार्मुक गुणः- यह वात वर्धक, लघुपाकी, मलों का शोषक तथा इससे शरीर में स्फूर्ति आती है। जैसे मद्य, लवण, पारद, दशमूल आदि।

18. स्थूलः- इसे लोक भाषा में मोटापन कहते हैं। इसमें पृथ्वी महाभूत की अधिकता होती है।

परिभाषाः- जो आकार में बड़ा होने से शीघ्र गति वाला न हो, उसे स्थूल कहते है।

लक्षणः- 1. ''यस्य सवरणे शक्ति स स्थूलः'' (हे०) 2. ''प्रसृतावयत्व स्थूलत्वम्।'' जिस गुण में स्रोतों का संवरण अर्थात् अवरोध करने की शक्ति हो तथा शारीरिक अंगों को स्थूल बनाने वाला हो, उसे स्थूल गुण कहते हैं।

कार्मुक गुणः- कफ वर्धक, शरीर को मोटा बनाने वाला, धातु वर्धक, गुरूपाकी, तथा मेदा वर्धक है। जैसे दधि, पिष्टी वाले पदार्थ आदि।

19. सान्द्रः-सान्द्र को लोकभाषा में गाढ़ापन कहा जाता है। इसमें पृथ्वी महाभूत की अधिकता होती है।

परिभाषाः- जो गुण शरीर की आर्द्रता को दूर करके अवयवों में पृथकता उत्पन्न करे, उसे सान्द्र कहा जाता है।

लक्षणः- ''यस्य प्रसादने शक्तिः स सान्द्रः'' जिस गुण में शरीर को पुष्ट करने की शक्ति हो, वह सान्द्र है।

कार्मुक गुणः- यह कफ वर्धक, धातु पुष्टि कर तथा सान्द्र स्थूल स्याद् बन्धकारक (सु) मलों को गाढ़ा करता है। जैसे मक्खन, मलाई, रबड़ी आदि।

20. द्रवः-लोकभाषा में द्रव को तरल या पतला कहा जाता है। इसमें जल महाभूत की अधिकता होती है।

परिभाषाः- जो गुण शरीर में आर्द्रता उत्पन्न करे उसे द्रव कहा जाता है।

लक्षणः- ''द्रवत्वं स्यन्दन कर्म कारणम्'' अर्थात् जिस गुण में व्याप्त होने की शक्ति हो, या जिस गुण के कारण कोई वस्तु बहती हो, वह द्रव है।

कार्मुक गुणः- यह क्लेद उत्पादक कफ, पित्त वर्धक, पसीने को दूर करने वाला तथा धातु वर्धक है। जैसे जल, दूध आदि।

JAYPEE BROTHERS

or detailed information on ayurveda books, visit our website www.jaypeebrothers.com, for detailed information on ayurveda books, visit our webs

द्रव्यगुण विज्ञान

(प्रथम भाग)

(राष्ट्रीय भारतीय चिकित्सा पद्धति आयोग के पाठ्यक्रमानुसार)

द्रव्यगुण प्रथम की विशेषता :-

- द्रव्यगुण के सप्त पदार्थों का परिचय
- सभी का विशेष वर्णन
- मिश्रक वर्ग के द्रव्य एवं प्रभाव
- जांगम द्रव्य परिभाषा
- द्रव्य शोधन अपमिश्रण औषध उत्पादक
- फार्मोकोलोजी के द्रव्यों का परिचय।

आचार्य वैद्य ताराचन्द शर्मा, एम.डी. (आयुर्वेद), स्व. पं. रामदत्त जी शर्मा के सुपुत्र, मूल निवासी बिसाऊ, झुन्झुनू (राजस्थान) में उत्पन्न अपना प्रारंभिक अध्ययन समाप्त कर जयपुर में आयुर्वेद अध्ययन वैद्य मुरारी मिश्र जी एवं वैद्य रामकृष्ण जी ढण्ढ के सानिध्य में कर्माभ्यास करते हुए आयुर्वेदाचार्य उपाधि प्राप्त की, 1968 से 1978 तक जयपुर एवं हरियाणा के विभिन्न महाविद्यालयों में अध्यापन कराते हुए पदार्थ विज्ञान, शरीर रचना विज्ञान, आयुर्वेद का इतिहास एवं द्रव्यगुण विज्ञान आदि विषयों पर पुस्तकों का लेखन किया। 1980 में पंजाब विश्वविद्यालय पटियाला से एम.डी. आयुर्वेद की उपाधि प्राप्त कर दिल्ली के मूलचन्द हॉस्पिटल में वरिष्ठ अनुसंधान अधिकारी के पद पर कार्यरत पं. हरिदत्त जी शास्त्री एवं श्री मुकुन्दीलाल जी द्विवेदी के सानिध्य में आयुर्वेद विश्वकोश तैयार किया जिसका एक भाग ''पन्चकर्म चिकित्सा विज्ञान'' चौखम्बा से प्रकाशित हो चुका है। 1995 में वैद्य शिवकुमार जी मिश्र, पूर्व सलाहकार आयुर्वेद, भारत सरकार के निर्देशन में संकलन कार्य पूर्ण कर मूलचन्द से निवृत्ति लेकर 1995 से मॉडल आई हॉस्पिटल, लाजपत नगर में अधीक्षक आयुर्वेद विभाग के पद पर कार्य कर रहे हैं, साथ ही स्वतंत्र चिकित्सा भी कर रहे हैं।

आपके लेख लगभग 200 अनेक पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुके हैं तथा अनेक सेमीनारों में शोधपत्र वाचन भी किये हैं। आप दिल्ली के जाने-माने सिद्धहस्त नाड़ी चिकित्सक हैं। आपकी 35 पुस्तकें अब तक प्रकाशित हो चुकी है। केन्द्रीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान संस्थान की पाँच पुस्तकोंः वैद्य मनोरमा, अभिनव चिन्तामणि, बृहत योग तरंगिणी, रसमन्जूषा, वैद्यक संग्रह का हिन्दी अनुवाद किया है। विगत 40 वर्षों से आप आयुर्वेद छात्रों में लेखक के रूप में प्रसिद्ध व्यक्तित्व के धनी हैं। आपको अनेक संस्थानों ने अनेक मानद उपाधियांः शताब्दी महर्षि, राजस्थान श्री, आयुर्वेद विश्व गौरव, आयुर्वेद महाप्राण प्रदान की है। वर्तमान में आप राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ, दिल्ली के राष्ट्रीय गुरु एवं नि.भा.आयुर्वेद विद्यापीठ के अध्यक्ष हैं। राष्ट्रीय आयुर्वेद विद्यापीठ द्वारा आपको लाईफ टाईम अचीवमेंट अवार्ड दिया गया है। अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान, सरिता विहार, दिल्ली द्वारा टीचर्स-डे पर आपको सम्मान-पत्र दिया गया है एवं दिल्ली सरकार द्वारा ''**वरिष्ठ नागरिक सम्मान**'' से भी सम्मानित किया गया है।

Printed in India

Available at all medical bookstores
or buy online at www.jaypeebrothers.com

JAYPEE BROTHERS
Medical Publishers (P) Ltd.
EMCA House, 23/23-B, Ansari Road,
Daryaganj, New Delhi - 110 002, INDIA
www.jaypeebrothers.com

Join us on facebook.com/JaypeeMedicalPublishers

ISBN 978-93-5696-167-8

9 789356 961678